शोध मंथन Vol. XIII No.II Apr.-June 2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

उत्तराखण्ड के जौनसार–बावर क्षेत्र का प्रसिद्ध लोकोत्सव ''मरोज़'' – एक अध्ययन

प्राप्तिः 16.05.2022
स्वीकृतः 04.06.2022

41

डॉ० अरविन्द वर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर–समाजशास्त्र
राजकीय महाविद्यालय
चकराता (देहरादून)
ईमेलः *vermaarvinddr19@gmail.com*

सारांश

जौनसार–बावर का क्षेत्र उत्तराखण्ड के देहरादून जनपद में स्थित एक महत्वपूर्ण जनजातीय क्षेत्र है। यह उत्तराखंड प्रदेश की नहीं बल्कि भारत की महत्वपूर्ण जनजातियों में से एक है। उत्तराखंड में यह अकेला विस्तृत जनजातीय क्षेत्र हैं जिसकी सांस्कृतिक परम्परा, सामाजिक परिवेश, मेलें, लोकोत्सव, त्यौहार एवं परम्परायें एक विशिष्ट स्थान रखती है। जौनसार–बावर जनजातीय क्षेत्र में मनाये जाने वाले लोकोत्सव की तिथि, समय एवं स्थान एक विशिष्ट परम्पराओं के साथ होता है। ऐसा ही इस क्षेत्र में मनाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण लोकोत्सव ''मरोज़'' है, जो शीतकाल में माघ के महीने में (जनवरी माह में) पूरे महीने भर मनाया जाता है तथा जिसे ''मकरैण'' भी कहा जाता है।

उत्सवों के सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि उत्सव चाहे किसी भी वर्ग का हो या कोटि का क्यों न हो, इसको मनाने वाले मानवों के जीवन के साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। ये समुदाय विशेष की संस्कृति के अभिन्न अंग तो होते ही हैं उनकी दैनिक जीवन की घिसी–पिटी जीवनचर्या में भी, अचिरकालीन ही सही, एक नवीन उमंग एवं आनन्द का संचार किया करते हैं।

जौनसारी उत्सवों में आपसी सौहार्द तथा सामाजिक चेतना इस जनजाति के समाज की प्रमुख विशेषता है। माघ माह के मेले हो या जनजातीय क्षेत्र की पहाड़ी दीपावली, उनका पारस्परिक सहयोग एवं उत्सवों को मनाने में विशेष उत्साह महत्वपूर्ण है। जौनसार–बावर की सामाजिक परम्परायें, सामाजिक ताने–बाने को पुष्ट करने का कार्य करती हैं। स्त्रियों का अपनी परम्पराओं के प्रति लगाव एवं जागरूकता जौनसारी संस्कृति को सामाजिक चेतना की ओर अग्रसर करती है। नारी सशक्तिकरण के दौर में जौनसार की महिलायें त्यौहारों, मेलों, उत्सवों के माध्यम से अपनी संस्कृति, भाषा, गीत, लोकगीत एवं परम्पराओं को बदलते युग के दुष्प्रभवाओं से बचाने का कार्य कर रही हैं।

प्रस्तुत शोधपत्र में इन्ही पहलुओं पर विस्तार से विचार एवं अध्ययन किया जा रहा है।

मुख्य बिन्दु

मरोज़, मकरैण, जौनसारी उत्सव, मरोज़ त्यौहार, जनजातीय लोकोत्सव मरोज़, जनजातीय लोकपर्व मरोज़।

जौनसार–बावर का क्षेत्र उत्तराखण्ड के देहरादून जनपद में स्थित एक महत्वपूर्ण जनजातीय क्षेत्र है। उत्तराखण्ड प्रदेश की ही नहीं बल्कि भारत की यह महत्वपूर्ण जनजाति है। उत्तराखण्ड में एकमात्र विस्तृत क्षेत्र जनजातीय हैं, जिसकी सांस्कृतिक परम्परा, सामाजिक परिवेश, मेले, त्यौहार व परम्परायें विशिष्ट स्थान रखती है। जौनसार क्षेत्र में मनाये जाने वाले उत्सवों की तिथि, समय व स्थान एक विशिष्ट परम्परा के साथ होता है।

जौनसारी लोकोत्सवों में आपसी सौहार्द तथा सामाजिक चेतना इस जनजाति के समाज की मुख्य विशेषता है। नारी सशक्तिकरण के दौर में जौनसार की महिलायें त्यौहारों, उत्सवों, मेलों के माध्यम से अपनी संस्कृति, भाषा, गीत, लोकगीत एवं परम्पराओं को बदलते युग के दुष्प्रभावों से बचाने का कार्य भी कर रही है।

संस्कृत के व्युत्पत्तिशास्त्र के अनुसार उत्सव शब्द की उत्पत्ति ''उत्'' पूर्वक सू–धातु से होती है जिसका अर्थ है ''आनन्दित होना'', ''उत्साहित करना'', ''प्रेरित करना''। पुरातन साहित्य में इसका सर्वप्रथम प्रयोग ऋग् (1,100,8 एवं 1,102,2) में देखा जाता है। इसके बाद के उत्तरवर्ती धार्मिक तथा लौकिक दोनों प्रकार के साहित्यों में तो इनके अनेक नाम–रूप पाये जाने लगते हैं।

लोकपर्वों का सीधा सम्बन्ध कृषि और पर्यावरण से है। उत्तराखण्ड की जौनसार–बावर जनजातियों का लोक जीवन मूल रूप से कृषि, पशुपालन और वन पर आधारित है। कृषक समाज लोकपर्वों के माध्यम से अपने भावों को व्यक्त करता है। यहाँ के स्थानीय पर्व–पहाड़ी दीपावली (दीयाई), विरुड़ी, बिस्सू, जात्रा का मेला, पांयता, नुणाई आदि प्रमुख हैं। इनमें से ''मरोज़'' पर्व जौनसार–बावर क्षेत्र का प्रमुख लोकपर्व है।

प्रस्तुत शोध पत्र में जौनसार–बावर जनजातीय क्षेत्र में अपने लोकपर्वों के प्रति जागरूकता का मूल्याकंन किया गया है, जिसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोत को प्रयोग में लाया गया है। प्राथमिक स्त्रोत के संकलन हेतु स्थानीय निवासियों से बातचीत के माध्यम से तथा शोधकर्ता द्वारा स्वयं क्षेत्र में रहकर जो महसूस किया उसका अवलोकन कर शोध अध्ययन में शामिल किया गया है। द्वितीयक स्त्रोत हेतु स्थानीय समाचार पत्र, डायरी, इन्टरनेट, पत्र–पत्रिकाओं का अध्ययन कर तथ्यों को सम्मलित किया गया है।

जिन तिथियों में आमोद, प्रमोद और हर्षोउल्लास व्यक्त किये जाते हैं, वे उत्सव कहे जाते हैं। लोकमानस की इच्छा के प्रसार से उत्पन्न 'हर्ष का उत्स' ही उत्सव कहलाता है। उत्सवों को सभी के द्वारा सामूहिक रूप से मनाया जाता है। नाच, गाना, खेल, तमाशा, हंसी–खुशी, नये वस्त्र–आभूषण, पकवान, संगी– प्रेमी सभी का इन मेलों–उत्सवों में मिलना–जुलना होता है। माँ, बेटियाँ, प्रेमी, रिश्तेदार सभी इन लोक उत्सवों में मिलते हैं तथा प्रसन्नचित्त होते हैं। इन मेलों का सांस्कृतिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, पुरातात्विक महत्व भी बहुत अधिक है।

उत्तराखण्ड में मनाये जाने वाले त्यौहारों, मेलों में अधिकांशतया देखा गया है कि मेले एवं सभी त्यौहार सौर–पंचाग, शक–सम्वत् से ही तय होते हैं। कुछ फसलों के त्यौहार हैं तो कुछ

आस्थाओं व मौसम विज्ञान के अनुसार मेले व त्यौहार तय होते हैं, विशेष रूप से हिमालयी क्षेत्रों के इलाकों में मेले एवं त्यौहार मौसमी या सौर पंचाग से सम्बन्धित तथा स्थानीय आवश्यकताओं व आस्थाओं के अनुसार त्यौहारों व मेलों को मनाया जाता है। पारम्परिक होली, दीवाली को छोड़कर स्थानीय मेलों को स्थानीय भौगोलिक स्तर तथा प्राकृतिक संसाधनों एवं मौसम की अनुकूलता के आधार पर मनाये जाने की परम्परा विशेष रूप से देखने को मिलती है।

हिमालयी क्षेत्र में निवास करने वाली जातियों में विशेष रूप से जनजातियों में त्यौहार एवं मेलों की परम्परा मौसम व प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर देखने को मिलती है। हिमालयी क्षेत्र में तोच्छा, मार्छा, गद्दी (भेड़–पालक) किन्नौर की जनजातियों व जौनसार–बावर की जनजातियाँ मौसमी हिसाब से अपने मेलों एवं त्यौहारों को मनाते हैं।

जौनसार–बावर में मनाया जाने वाला एक ऐसा ही उत्सव ''मरोज़'' है जिसको ''मकरैण'' भी कहा जाता है। जो कि जनवरी माह में मनाया जाता है। जब चारों तरफ बर्फ का माहौल रहता हैं तब इष्टमित्र एक साथ मिलकर बकरों को काटकर माँस को रिश्तेदारों, परिचितों को बुलाते है, दावत करते हैं तथा माँस का हिस्सा भी भिजवाते हैं, विशेष रूप से अपनी विवाहिता लड़की के ससुराल वालों के यहाँ तथा अन्य रिश्तेदारों को भेजते हैं जिसको ''बांटी'' कहा जाता है। ये उत्साहपूर्वक सामूहिक रूप से नृत्य एवं आनन्दपूर्वक उत्सव को मनाते हैं। यह परम्परा उच्च हिमालयी क्षेत्रों में मनाये जाने के प्रमाण मिलते हैं।

जौनसार–बावर में प्रतिवर्ष जनवरी की शुरूआत में मनाए जाने वाले माघ–मरोज़ उत्सव का विशेष महत्व है। इसके पीछे की कहानी बड़ी रोचक एवं डरावनी है। लोक मान्यता के अनुसार सैकड़ों वर्ष पहले जौनसार–बावर में बहने वाली टोंस नदी का प्राचीन नाम 'कर्मनाशा' था। बताते है कि पहले 'कर्मनाशा' नदी में नरभक्षी कहे जाने वाले किरमीर राक्षस का वास हुआ करता था। जिसे हर रोज एक नरबलि चाहिए होती थी। इस तरह क्षेत्र में मानव संख्या लगातार घटती चली गई। राक्षस के आंतक से मुक्ति दिलाने को मैंद्रथ गांव निवासी हुणाभाट नामक पंडित ने कुल्लू–कश्मीर जाकर सरोवर ताल के पास भगवान शिव की कठोर तपस्या की। जिसके बाद मानव कल्याण की रक्षा को चार भाई महासू के रूप में देवता, राक्षस का खात्मा करने के लिए मैद्रथ व हनोल में अवतरित हुए। महासू देवता को भगवान शिव का अपभ्रंश माना जाता है। कहते है कि महासू देवता के सबसे पराक्रमी वीर सेनापति कयलू महाराज ने नरभक्षी किरमीर राक्षस को मौत के घाट उतारा। जिससे स्थानीय जनता को किरमीर राक्षस के अत्याचार व आंतक से हमेशा के लिए छुटकारा मिल गया। राक्षस के मारे जाने की खुशी में समूचे इलाके में बकरे काटे गए और धूमधाम से जश्न मनाया गया। लोक–परम्परानुसार किरमीर राक्षस का खात्मा 26 गते पौष मास के दिन हुआ। इसके बाद समूचे इलाके में हनोल के कयलू महाराज मंदिर में हर वर्ष चुराच़ का बकरा चढ़ाए जाने से पौष मास के माघ–मरोज़ मेले के जश्न की शुरूआत होती है। जो परम्परा का हिस्सा बन गई। प्रत्येक वर्ष दस से बारह जनवरी के बीच समूचे जौनसार–बावर में चरणबद्ध तरीके से परम्परागत माघ–मरोज़ मेले की शुरूआत होती है और यह एक माह तक मनाया जाता है।

लोक उत्सवों के सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि उत्सव चाहे किसी भी वर्ग का या कोटी का क्यों न हो इसके मनाने वाले मानवों के जीवन के साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। ये समुदाय विशेष की संस्कृति के अभिन्न अंग तो होते ही हैं उनकी दैनिन्दिनी की घिसी–पिटी जीवनचर्या में भी,

अचीरकालीन ही सही, एक नवीन उमंग एवं आनन्द का संचार किया करते हैं। एक ओर ऊबा देने वाली दिनचर्या में एक प्रेरक नवीनता प्रदान करने के अतिरिक्त सभ्य जगत में इनका धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व भी होता है, क्योंकि इनमें, इन्हें मनाने वाले समुदाय विशेष की अतीत की सांस्कृतिक परम्पराओं एवं ऐतिहासिक घटनाओं का इतिहास भी अर्न्तनिहित होता है, अर्थात इनके विश्लेषणों के माध्यम से व्यक्ति समाज विशेष की उन परम्परागत मान्यताओं, आस्थाओं और लोकाचारों के अतीत में झांक सकता है जो कि अन्यथा अब स्मृति पटल से ओझल हो चुकी होती है। अतः इनको संरक्षित करने की आवश्यकता है।

संदर्भ

1. शर्मा, डी०डी०. (2007). उत्तराखण्ड के लोकोत्सव एवं पर्वोत्सव. अंकित प्रकाशन. हल्द्वानी. पृष्ठ **40–41.**
2. बलूनी, दिनेशचन्द. (2005). उत्तराचंल के लोकगीत. प्रकाशन सूचना विभागः नई दिल्ली. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार. पृष्ठ **110–116.**
3. बाबुलकर, मोहनलाल. (2004). गढ़वाली लोकसाहित्य की प्रस्तावना. भगीरथी प्रकाशनः नई दिल्ली. पृष्ठ 10–14.
4. जोशी, लक्ष्मीकांत. (2007). हारूल– जौनसार बावर के पौराणिक लोकगीत. विनसर पब्लिकेशनः देहरादून. पृष्ठ **328–337.**
5. चातक, गोविन्द. (2003). गढ़वाली लोकगीतः एक सांस्कृतिक अध्ययन. तक्षशिला प्रकाशनः नई दिल्ली।
6. सांकृत्यायन, राहुल. हिमाचल–1. वाणी प्रकाशनः दिल्ली।
7. बहुगुणा, विजय. (2016). उत्तराखण्ड का जन– इतिहास. लोक संस्कृति. समयसाक्ष्य पब्लिकेशन फालतू लाईनः देहरादून. पृष्ठ **198–217.**
8. डबराल, शिव प्रसाद. (1971). उत्तराखण्ड का इतिहास भाग–4. वीरगााथा प्रकाशनः दोगड्डा. पृष्ठ **116.**
9. शाह, टीकाराम. (2016). जौनसार–बावरः ऐतिहासिक संदर्भ समाज, संस्कृति और इतिहास, विनसर पब्लिशिंग कं०ः देहरादून. पृष्ठ 307–320.
10. एट्किसंन, ई०टी०. (1884). जिल्द–2. भाग–2.
11. (2020). दैनिक जागरण. 05 जनवरी।